



THE TIMES OF INDIA

Date: 19-07-24

The Real Welfare

Govt schemes keep multiplying. But they are no replacement for regular jobs. Parties must recognise this

TOI Editorial



Maharashtra govt has instituted a monthly stipend of ₹6,000 to ₹10,000 for men aged 18 to 35, and a dole of ₹1,500 a month for poor women (annual family income below ₹2.5L) aged 21 to 65. To qualify, women must be married, divorced, widowed, deserted or destitute; one single woman from each poor household is also entitled. The gendered handouts reiterate how women are viewed. But the very need for such sops/welfare is the real story. The women's scheme will cost ₹46k cr annually, the men's ₹10k cr a year. Over 44L applications have been received for the women's scheme in the two weeks since it was announced – govt is expecting 1cr applications by Aug 31.

'Welfare' can't replace wages | The scheme for men, said CM Eknath Shinde, is their "solution" to the unemployment problem. Govt believes it has responded to the jobs crisis. Unemployment was an issue during LS elections and promises to remain an issue in the forthcoming assembly polls. Reality check for politicians: can dole and stop-gap arrangements mask a no-jobs crisis?

Netas know better | In 2018, for 26,502 rail vacancies at one level (loco-pilots and technicians), there were 47.6L applications; at another level (assistants, helpers), 62,907 vacancies had 1.9cr applications. This was seen even in the attempted Karnataka private jobs quota bill, where unemployment rate among educated young population (15-29) is around 17.2%, up from 11.8% a decade ago, per India Unemployment Report 2024. More than half of India's population depends on free grain from GOI. Demand for MGNREGA has been up – in 2019-20, work generated was 265.3cr person days. In 2023-24, it was 305.2cr – 40cr more.

Between eco numbers & ground reality | All this is happening when the macroeconomy is robust. IMF forecast a 7% growth, making India a standout major economy in terms of headline numbers. But consumption growth remains tepid. Employment data, from various official sources, use definitions that are at considerable variance to common sense definitions of a job. Welfare packages are more based on ground reality than jobs data. Young Indians going back to farm jobs and/or doing occasional non-farm work aren't the answer. To solve a problem, we must first acknowledge it.

THE ECONOMIC TIMES

Date: 19-07-24

So, the Seine's Now Clean, Ganga, Anyone?

ET Editorial

Cleaning up large rivers is never easy. Proving they are clean and restoring citizen confidence in them is even tougher. Ask Paris mayor Anne Hidalgo. Earlier this week, she got into the Seine to take a well-publicised swim to prove that the city's most famous river had been cleaned up enough for Olympic swimmers to swim in later this month. Swimming in the Seine had been banned since 1923 due to high pollution levels. Since 2015, organisers invested \$1.5 bn to prepare it for the Olympics and to ensure Parisians have a cleaner river after the Games. It seems Parisians now have a river to swim in without worry.

The questions raised about Seine's cleanliness provide a good opportunity to check the status of India's lifeline and most famous, the Ganga. Three mega projects have been launched since the 1980s — Ganga Action Plan (1985), National Ganga River Basin Project (2008), and Namami Gange Programme (2014). According to the Central Pollution Control Board (CPCB), around ₹20k cr was spent on cleaning the Ganga between 1986 and 2014. Since 2014, another ₹13k cr has been allocated and spent by October 2022.

But we don't yet have a clear answer to any progress made. In Parliament last year, Jal Shakti ministry said that the river has seen 'varying degrees of improvement' in water quality and that the number of polluted stretches has come down. However, news reports point out that the CPCB report quoted by the ministry didn't mention what he had said. Cleaning the river, the ministry added, is a continuous process, and National Mission for Clean Ganga is implementing several conservation and rejuvenation initiatives for the Ganga and its tributaries. That's good. But nearly 25 years on, one would have expected better results for a river we consider 'sacred'.



दैनिक भास्कर

Date: 19-07-24

भ्रष्टाचार दूर करना सबसे पहली शर्त होनी चाहिए

संपादकीय



अगर कोई राज्य दशकों से विकास से दूर हो, भ्रष्टाचार शासकीय ढांचे को घुन की तरह खा चुका हो और प्रशासनिक अकर्मण्यता स्वीकृत नॉर्म बन चुका हो तो क्या उसे केवल विशेष राज्य के दर्जे के नाम पर अतिरिक्त फंड की संजीवनी देकर पटरी पर लाया जा सकता है? अगर उद्घाटन से पहले करोड़ों की लागत से बने पुल ढह जाएं या बनने के कुछ समय बाद ही पुल नदी में समा जाए तो विशेष दर्जा मिलने से सिस्टम का करप्शन कम नहीं होगा बल्कि बढ़ेगा। विशेष दर्जे का लाभ केवल केन्द्रीय योजनाओं में राज्य के अंशदान को 60% से घटाकर 10% करता है और कुछ अतिरिक्त

मदद केंद्र से मिलती है। लेकिन अगर वह राज्य विकास के मद में मिले धन को, यहां तक कि पूंजीगत खर्च के मद में बजटीय राशि भी खर्च न कर पाता हो (बकौल सीएजी वर्ष 2023 में 66,502 करोड़ रुपए की बड़ी राशि बगैर खर्च हुए वापस हो गई) तो क्या उसकी जरूरत फंड की है या उपलब्ध फंड को खर्च करने की? अगर ऐसे राज्य में शहरीकरण मात्र 12% हो, देश में एमएसएमई सेक्टर के कुल उत्पादन में इसका शेयर मात्र 1.32% हो, जिस राज्य में परिवार नियोजन की असफलता के कारण सर्वाधिक टीएफआर हो जिससे देश की आबादी में कुल हिस्सा 10% 'चुका हो (जबकि जीडीपी में मात्र 2.8%) क्या उसे अतिरिक्त फंड से ज्यादा उपलब्ध फंड के समुचित इस्तेमाल की जरूरत है?



दैनिक जागरण

Date: 19-07-24

भोजशाला का भी सच सामने आया

हरेंद्र प्रताप, (लेखक बिहार विधान परिषद के पूर्व सदस्य हैं)

हाल में भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण (एएसआइ) ने मध्य प्रदेश स्थित धार शहर के ऐतिहासिक भोजशाला परिसर के पुरातात्विक सर्वेक्षण की रिपोर्ट मध्य प्रदेश हाई कोर्ट की इंदौर खंडपीठ को सौंपी। दावा है कि इस सर्वेक्षण में 94 टूटी हुई मूर्तियों सहित 1,700 से अधिक चीजें ऐसी मिली हैं, जो बताती हैं कि भोजशाला स्थित वाग्देवी यानी सरस्वती देवी के मंदिर को मुस्लिम आक्रांताओं ने तोड़कर उसके अवशेष से मस्जिद बनाई थी।

इस रिपोर्ट के न्यायालय में प्रस्तुत होने के बाद हिंदुओं को अब न्याय की प्रतीक्षा है। धार में परमार वंश के राजा भोज ने वर्ष 1000 से 1055 तक शासन किया था। वह मां सरस्वती के अनन्य भक्त थे। वर्ष 1034 में उन्होंने एक महाविद्यालय की स्थापना की, जिसे 'भोजशाला' के नाम से जाना जाता है। वर्ष 1305 में अलाउद्दीन खिलजी ने उसे ध्वस्त कर दिया।

फिर वर्ष 1401 में दिलावर खान ने भोजशाला के एक हिस्से में मस्जिद बनवा दी। भोजशाला को लेकर लंबे समय से विवाद चल रहा है। इस पर मध्य प्रदेश हाई कोर्ट में कई याचिकाओं पर सुनवाई हो रही है। इसी के तहत हाई कोर्ट ने गत मार्च में एक आदेश जारी कर एएसआइ को भोजशाला का पुरातात्विक सर्वेक्षण करने का निर्देश दिया था।

जिस तरह अयोध्या, काशी और मथुरा से हिंदू समाज का एक गहरा भावनात्मक रिश्ता है, उसी तरह भोजशाला से भी। काशी विश्वनाथ मंदिर का विवाद तो सर्वविदित है। औरंगजेब ने उसे तोड़कर ज्ञानवापी परिसर बनाया। सैकड़ों वर्ष के संघर्ष के बाद 1991 में यह मामला कोर्ट में पहुंचा। फिर 2021 में पांच हिंदू महिलाओं ने वाराणसी सिविल कोर्ट में याचिका दाखिल कर ज्ञानवापी स्थित शृंगार गौरी में पूजा की अनुमति मांगी।

न्यायालय के काफी चक्कर लगाने के बाद अंततः 2023 में वाराणसी जिला अदालत ने ज्ञानवापी परिसर में पुरातात्विक सर्वे की अनुमति दी। सर्वे करने वाली एएसआइ की टीम ने वैज्ञानिक सर्वेक्षण, वास्तुशिल्प अवशेषों, कलाकृतियों, शिलालेखों, कला और मूर्तियों के अध्ययन के आधार पर वहां मौजूदा संरचना के निर्माण से पहले एक हिंदू मंदिर होने कि पुष्टि करते हुए इसी साल जनवरी में अपनी रिपोर्ट न्यायालय को सौंपी।

ज्ञानवापी और भोजशाला की तरह ही मथुरा में भी श्रीकृष्ण जन्मभूमि मंदिर परिसर की ईदगाह मस्जिद के पुरातात्विक सर्वेक्षण का आदेश इलाहाबाद हाई कोर्ट ने दिया था। इस पर सुप्रीम कोर्ट ने रोक लगा दी है। उसके फैसले की प्रतीक्षा है। इलाहाबाद हाई कोर्ट आगरा स्थित शाही मस्जिद की सीढ़ियों में भगवान श्रीकृष्ण के विग्रह दबे होने के दावे की जांच एएसआइ विभाग से कराने की मांग वाली एक याचिका की सुनवाई कर रहा है। हाई कोर्ट ने सर्वे के संबंध में एएसआइ से जवाब मांगा है। इस मामले की अगली सुनवाई 5 अगस्त को होनी है।

मुस्लिम पक्ष के विरोध के बाद भी उच्च न्यायालयों द्वारा मथुरा तथा भोजशाला मंदिर की जांच एएसआइ विभाग को देने के आदेश के बाद जहां एक तरफ यह विश्वास बढ़ा है कि हिंदू मंदिरों का सत्य अब सामने आएगा, वहीं दूसरी तरफ एक शंका यह भी है कि क्या अयोध्या में प्रभु श्रीराम के जन्मस्थान पर मंदिर तोड़ कर बनाए गए विवादित ढांचे को हटाने के लिए दशकों चले मुकदमे की तरह उपरोक्त मामले भी न्यायालय में लटक तो नहीं जाएंगे? सच्चाई सामने न आए, इसके लिए मुस्लिम पक्ष बार-बार न्यायालय में जाकर सुनवाई को रुकवाने का प्रयास कर रहा है।

उपासना स्थल अधिनियम, 1991 का हवाला देकर मुस्लिम आक्रांताओं के कृत्यों को नकारने का असफल प्रयास किया जा रहा है। यह एक सच्चाई है कि मुस्लिम आक्रांताओं ने भारत पर आक्रमण कर इस देश के अनेक पूजा स्थलों को तोड़ा, विश्वविद्यालयों को जलाया और महिलाओं-बच्चों समेत सभी पर भयंकर अत्याचार किए। गैर हिंदुओं पर अत्याचार का सिलसिला भारत विभाजन के बाद बने पाकिस्तान और बांग्लादेश में भी जारी है। इन देशों में हिंदुओं के पूजा स्थल अभी भी तोड़े जा रहे हैं।

आक्रांता इस्लामी आक्रमणकारियों ने पूजा स्थल नहीं तोड़े, यह कहना सरासर झूठ है। वामपंथी इतिहासकार इरफान हबीब ने भी स्वीकार किया है कि मथुरा और काशी के मंदिरों को तोड़कर मस्जिदें बनाई गई थीं। उन्होंने यह भी माना कि औरंगजेब ने मंदिर तोड़कर गलत किया। राम भक्तों के धैर्य की सीमा जब समाप्त हो गई तो छह दिसंबर, 1992 को उन्होंने अयोध्या में विवादित ढांचे को ध्वस्त कर दिया।

अयोध्या में उस दिन वह आक्रोश इस्लामिक आक्रमण और न्यायपालिका के टाल-मटोल के खिलाफ भड़का था। भविष्य में ऐसी कोई अनहोनी न घटे और हिंदुओं-मुस्लिमों में आपसी तनाव न भड़के, इसका ध्यान रखना होगा। पुरातात्विक प्रमाण होने के बाद भी न्यायालय इन मामलों का जल्द निपटारा नहीं कर पा रहे हैं।

इस्लाम भले ही बाहर से आयातित पंथ हो, लेकिन उसके अनुयायी इसी मिट्टी के लोग हैं। यह भी एक तथ्य है कि इस्लामिक आक्रमण, इस्लामिक आतंकवाद तथा इस्लाम के आधार पर हुए देश के बंटवारे के कारण इस्लाम और हिंदुत्व के बीच अविश्वास की दीवार खड़ी हुई है। प्रार्थना या इबादत में अंतर मानकर पूजा स्थल से अतिक्रमण हटाकर इबादत या नमाज के लिए दूसरी जगह की मांग और उसकी व्यवस्था समस्या का एक सकारात्मक हल होगा।

जिस प्रकार अयोध्या का शांतिपूर्ण समाधान हुआ, उसी प्रकार काशी, मथुरा और धार स्थित भोजशाला का भी समाधान इस देश के अंदर सद्भाव का वातावरण निर्मित करेगा। राम मंदिर प्राण प्रतिष्ठा कार्यक्रम में अयोध्या के मुस्लिम पक्ष की सहभागिता ने एक नए युग की शुरुआत का संदेश दिया है। हिंदू पक्ष को मुस्लिम पक्ष से जो अपेक्षा है, उसकी पूर्ति होनी चाहिए।



Date: 19-07-24

साख का सवाल

संपादकीय

अक्सर ऐसी खबरें आती हैं, जिनमें किसी अभ्यर्थी ने फर्जी प्रमाणपत्रों के आधार पर नौकरी हासिल कर ली। मगर संघ लोक सेवा आयोग यानी यूपीएससी जैसी संस्था आमतौर पर इस तरह के आरोपों से बची रही है। माना जाता रहा है कि यूपीएससी की किसी परीक्षा को पास करने के बाद नियुक्ति के लिए चुने गए अभ्यर्थी के प्रमाणपत्रों की गहन जांच होती है। मगर भारतीय प्रशासनिक सेवा के लिए चुनी गई एक अधिकारी पूजा खेडकर के पद के दुरुपयोग के मामले में और उसके बाद जैसी खबरें आ रही हैं, उससे यही लगता है कि संघ लोक सेवा आयोग जैसे उच्च स्तरीय संस्थान में भी किसी उम्मीदवार के प्रमाणपत्रों की जांच को लेकर लापरवाही या उदासीनता बरती जाती है। गौरतलब है कि पुणे में प्रशिक्षु आइएएस अधिकारी पूजा खेडकर यूपीएससी की परीक्षा में चुने जाने के लिए खुद को शारीरिक रूप से दिव्यांग और अन्य पिछड़ा वर्ग समुदाय का बताने के लिए फर्जी प्रमाणपत्र पेश करने के आरोपों का सामना कर रही हैं। उन पर पुणे में तैनाती के दौरान विशेषाधिकारों का दुरुपयोग करने का भी आरोप है।

हैरानी की बात यह है कि पूजा खेडकर का मामला सुर्खियों में आने के बाद अब भारतीय प्रशासनिक सेवा और भारतीय पुलिस सेवा के कुछ अन्य अधिकारियों के बारे में भी यह दावा किया गया है कि उन्होंने अन्य पिछड़ा वर्ग और आर्थिक रूप से कमजोर वर्गों के लाभ उठाने के मकसद से फर्जी प्रमाणपत्रों का उपयोग किया है। सवाल है कि जब कोई अभ्यर्थी यूपीएससी की परीक्षाओं में सभी स्तर को पार करके चुन लिया जाता है, तब उसके बाद नियुक्ति के पहले उसके प्रमाणपत्रों की जांच को लेकर कैसी व्यवस्था है कि कोई व्यक्ति हेराफेरी करके अपने लिए प्रमाणपत्र बनवा लेता है, जिसे

यूपीएससी भी अपनी जांच में पकड़ नहीं पाता। अब संभव है कि संदिग्ध अधिकारियों के प्रमाणपत्रों की फिर से गहन जांच हो। लेकिन अगर फर्जीवाड़े के आरोप सही पाए गए तो जिस यूपीएससी के समूचे तंत्र को पूरी तरह पाक- साफ और चौकस बताया जाता है, वहां अभ्यर्थियों के प्रमाणपत्रों की जांच में इस कदर लापरवाही बरतने को लेकर कैसी धारणा बनेगी? क्या यह देश के सबसे विश्वसनीय माने जाने वाले संस्थान की साख का सवाल नहीं है?

राष्ट्रीय सहारा

Date: 19-07-24

'भूमिपुत्र' की राजनीति

संपादकीय

कर्नाटक की सिद्धारमैया सरकार ने भारी विरोध के बाद बुधवार को उस विवादित विधेयक पर रोक लगा दी है, जिसके तहत निजी क्षेत्र में कन्नड़ लोगों के लिए नौकरियों का प्रावधान किया गया था। इस विधेयक को बृहस्पतिवार को विधानसभा में प्रस्तुत किया जाना था। हैरानी की बात है कि संविधान की मूल भावनाओं को समझे बगैर कर्नाटक की कैबिनेट ने इस विधेयक को मंजूरी दी। कर्नाटक राज्य उद्योगों, कारखानों और अन्य प्रतिष्ठानों में स्थानीय उम्मीदवारों के लिए रोजगार विधेयक-2024 के प्रस्तावों के मुताबिक, निजी क्षेत्र के कंपनियों को प्रबंधन स्तर की 50 प्रतिशत और गैर- प्रबंधन स्तर की 70 प्रतिशत नौकरियां कन्नड़ लोगों को अनिवार्य रूप से देनी होगी। इस विधेयक में यह भी प्रावधान था कि निजी क्षेत्र की कंपनियों में समूह सी और डी श्रेणी के पदों के लिए स्थानीय निवासियों को 100 फीसद आरक्षण दिया जाएगा। इस तरह की 'भूमिपुत्र' नीति लागू करने वाला कर्नाटक पहला राज्य नहीं है। आंध्र प्रदेश ने 2019 में हरियाणा ने 2020 में इसी तरह के मिलते-जुलते विधेयक पारित किए थे। वस्तुतः स्थानीय लोगों को निजी प्रतिष्ठानों में आरक्षण देने का प्रावधान शेष भारत के नागरिकों के साथ भेदभाव पैदा करता है जो भारतीय संविधान के अनुच्छेद 14 का उल्लंघन करता है, जिसमें कहा गया है कि राज्य भारत के राज्य क्षेत्र में किसी व्यक्ति को कानून के समक्ष समानता से या कानूनों के समान संरक्षण से वंचित नहीं करेगा। इन्हीं आधारों पर पंजाब और हरियाणा उच्च न्यायालय में दो सदस्यीय खंडपीठ ने 17 नवम्बर, 2023 को हरियाणा सरकार के कानून हरियाणा राज्य स्थानीय उम्मीदवारों के रोजगार अधिनियम, 2020 रद्द कर दिया जिसके तहत राज्य के निवासियों के लिए हरियाणा के उद्योगों में 75 फीसद आरक्षण का प्रावधान था। निजी कंपनियों का मानना है कि ऐसे कानून नियोक्ताओं के संवैधानिक अधिकारों पर कुठाराघात करते हैं। निजी क्षेत्र की नौकरियां कर्मचारियों की योग्यता और कौशल पर आधारित हैं। वस्तुतः नई आर्थिक नीतियों के कारण अब सार्वजनिक क्षेत्र में नौकरियां सीमित हो गई हैं। रोजगार के ज्यादातर अवसर अब निजी कंपनियों में ही रह गए हैं। इसलिए सरकारों को चाहिए कि ऐसे कदम न उठाएं जिनसे निजी कंपनियों के हितों पर चोट पहुंचे।